Integral Research (Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/ ISSN:XXX-XXX, Vol. 01, No. 03, May.2024

इक्कीसवीं सदी की संस्कृत कविताओं में सामाजिक यथार्थ

डॉ.अरुण कुमार निषाद*
असिस्टेण्ट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग)
मदर टेरेसा महिला महाविद्यालय,
कटकाखानपुर, द्वारिकागंज, सुल्तानपुर
शिखारानी
शोधच्छात्रा
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

Abstract

साहित्य को मानव जीवन और उसके चारों ओर के विशाल विश्व का कलात्मक चित्रण (चित्र) कहा गया है, क्योंकि यह समाज और समाज की इकाई (मनुष्य) का व्यापक जीवन-चित्र प्रदान करता है। समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के कारण है। एक लेखक अपने आस-पास के समाज को सूक्ष्मता से देखता है, महसूस करता है और जब वह अनुभूति परिपक्व हो जाती है तो उसे एक रूप दे देता है। लेखक अपनी रचनाओं में तत्कालीन समाज का चित्रण करता है। समाज की वास्तविकता को कई रूपों में दर्शाया जा सकता है। इस प्रकार साहित्य में यथार्थ के अनेक रूपों का चित्रण किया जा सकता है। साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। साहित्य वैसा ही समाज होगा. इसे इक्कीसवीं सदी के संस्कृत कवियों ने सिद्ध किया है।

Keywords: साहित्य, कलात्मक अंकन, यथार्थवाद, अभिव्यक्तिकरण, शोलोखोफ

साहित्य को मानव जीवन और उसके आसपास की व्यापक सृष्टि का कलात्मक अंकन (चित्र) कहा गया है, क्योंकि उसमें समाज और समाज की इकाई (मनुष्य) का व्यापक जीवन-चित्र उपलब्ध होता है। समाज और साहित्य एक-दूसरे के पूरक हैं। एक-दूसरे से ही दोनों का अस्तित्व है। एक रचनाकार अपने आसपास के समाज को सूक्ष्म रूप से देखता है, उसे अनुभूत करता है और जब वह अनुभूति परिपक्व हो जाती है तब उसे रूपाकार देता है। रचनाकार अपनी रचनाओं में समकालीन समाज को चित्रित करता है। समाज के यथार्थ का चित्रण कई रूपों में किया जा सकता है। इस तरह साहित्य में यथार्थ के अनेक रूपों का चित्रण दिखाई पड़ता है।

यथार्थ अंग्रेजी शब्द 'real' का हिन्दी रूपान्तरण है, जिसकी व्युत्पति लैटिन के 'res' धातु से हुई है । यथार्थ मूलत: दर्शनशास्त्र से सम्बन्धित शब्द है । यथार्थ शब्द का सामान्य अर्थ है- जो जैसा है, ठीक वैसा, सत्य, प्रकृत, वस्तुत: आदि अर्थात् जो जैसा है, उसे ठीक उसी रूप में प्रस्तुत करना यथार्थ है । साहित्य में यथार्थ प्राय: यथार्थवाद के रूप में प्रयुक्त होता है ।[2] वास्तव में यथार्थ एक दृष्टि है और यथार्थवाद उस दृष्टि को अभिव्यक्त करनेवाली

*Corresponding Author: **Dr. Arun Kumar Nishad**
E-mail: arun.ugc@gmail.com
Received 02 May 2024; Accepted 19 May 2024. Available online: 30 May 2024.
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

[2]https://ir.nbu.ac.in/bitstream/123456789/981/1/36_Dushyant%20Kumar%20Ki%20Kavita%20Mein%20Samajik%20Yatharth.pdf

एक विशेष शैली है । इस प्रकार यथार्थवाद यथार्थ का कलात्मक प्रतिबिम्ब हुआ । इसीलिए साहित्य में इन दोनों के मध्य कोई विशेष भेद नहीं किया जाता ।

त्रिभुवन सिंह के अनुसार- "जीवन की सच्ची अनुभूति यथार्थ है, पर उसका कलात्मक अभिव्यक्तिकरण यथार्थवाद है ।" यथार्थवाद का उदय सर्वप्रथम फ्रांस में हुआ ।

यथार्थवाद को परिभाषित करते हुए संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि, कहानीकार, नाटककार एवं आलोचक आचार्य डॉ.हर्षदेव माधव लिखते हैं-

उपेक्षितान् प्रति प्रतिबद्धः करुणामूलः सामाजिकवास्तववादः |[3]

उपेक्षितों के प्रति प्रतिबद्ध करुणामूल सामाजिक वास्तववाद (समाजवादी यथार्थवाद) है |

रशियादेशे सामाजिकवास्तववादस्योद्भवो जातः | कलाकारः समाजवादिराज्यस्य प्राणभूतमङ्गमस्ति। समाजप्रश्नानां कलात्मिका-भिव्यक्तिरेव कलाकारकर्त्तव्यमस्ति। शोलोखोफस्तोऽस्य पुरस्कर्त्ता आसीत्।

अस्मिन् वादे निम्नवर्गस्य जनानां सुखदुःखानां, सामाजिक-वैषम्यस्य संक्षोभकं चित्रणं, दीनता-शोषण-अत्याचार-लोकजीवन- कुत्सितांशानां समालेखनं प्राप्यते । बाल्झाक एमिल झोलापुश्किन- दोस्तोयवस्की-प्रभृतीनां कथासृष्टिरीदृशी । केशवचन्द्रदाश-वनमालि- विश्वालनारायणदाशानां लघुकथानिकासु समाजोपेक्षितान् प्रति करुणा-ऽनुभूयते। श्रमिकाणामवदशाऽपि वर्ण्यते वादेऽस्मिन्। साम्प्रतकवीनां काव्यरचनास्वपि सामाजिकवादमयं निरूपणमस्त्येव । निरलङ्कारा निराडम्बरा नैसर्गिकी भाषा सर्जकैः स्वीक्रियते । कामलोलुपत्व-तृष्णा- स्वार्थ-सुखप्राप्त्युद्यमादीनामपि काव्याभिव्यक्तिर्भवति ।

वसनं परिधूसरं वसाना नितरां क्षाममुखी हतस्वरूपा ।

अतिनिष्करुणेन केन नीता जनतैषा कठिनां दशां विषण्णाम् ।।[4]

x x x

'कयामत' इत्याख्यात्

आप्रलयकालाद्

उष्ट्र उष्ट्रः,

रणं रणं भवतु ।

किन्तु 'कयामत' दिवसोत्तरम्

उष्ट्रो रणं भविष्यति

[3] वागीश्वरीकण्ठसूत्रम्, आचार्य हर्षदेव माधव, सम्पादक डॉ.प्रवीण पण्ड्या, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ संख्या 74-76

[4] वागीश्वरीकण्ठसूत्रम्, आचार्य हर्षदेव माधव, सम्पादक डॉ.प्रवीण पण्ड्या, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ संख्या 75

रणमुष्टतां गमिष्यति ॥[5]

रूस में सामाजिक यथार्थवाद का उद्भव हुआ। कलाकार समाजवादी राज्य का प्राणभूत अङ्ग है। समाज प्रश्नों की कलात्मक अभिव्यक्ति ही कलाकार का कर्त्तव्य है। शोलोखोफ उसका (समाजवादी यथार्थवाद के सिद्धान्त का) पुरस्कर्त्ता था ।

इस वाद में निम्न वर्ग के लोगों के सुख-दुःखों, सामाजिक विषमता का क्षुब्ध करने वाला चित्रण, गरीबी, शोषण, अत्याचार और लोकजीवन के कुत्सित अंशों का आलेखन प्राप्त होता है। बाल्झाक, एमिल झोला, पुश्किन, दोस्तोयवस्की प्रभृति लेखकों का कथा-संसार ऐसा ही है।

केशवचन्द्रदाश, बनमाली बिश्वाल, नारायदाश की लघु-कथाओं में समाज के उपेक्षित वर्ग के प्रति करुणा अनुभूत होती है। श्रमिकों की अवदशा का वर्णन भी इस वाद में होता है| आधुनिक कवियों की रचनाओं में सामाजिक (समाजवादी) यथार्थवाद का निरूपण है | अलंकार-आडम्बर रहित नैसर्गिक भाषा का प्रयोग होता है | कामलोलुपता, तृष्णा, स्वार्थ, सुखप्राप्ति, उद्यत आदि की काव्याभिव्यक्ति होती है |

रचनाकार सत्य के आधार पर सामन्ती रूढ़ियों के प्रति विद्रोह करते हैं और साथ ही सामाजिक व्यङ्ग्य के स्वर को भी उभारते हैं। इनकी व्यक्तिमूलक, विद्रोहात्मक और द्वन्द्वग्रस्त जीवन दृष्टि, इनकी सौन्दर्यपरक कविताओं, करुणात्मक रचनाओं तथा रहस्यात्मक अनुभूतियाँ काव्य के मूल में हैं। जिस समाज में वो रहते थे उस समाज के वास्तविक जीवन का चित्रण अपनी विभिन्न कविताओं में व्यापक रूप से किया है। उनकी कविताओं में समाज का वास्तविक दर्पण झलकता है। समाज में हो रहे अत्याचार, शोषक का शोषित के प्रति दृष्टिकोण एवं विसंगतियों को अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज के लोगों को अवगत कराया है।

सीधी-सी बात है कि जो भी रचनाकार जिस परिवेश में फलता-फूलता है | उस परिवेश का असर उस पर स्वाभाविक रूप से पड़ता है और उसके द्वारा सृजन किये गए साहित्य में उस परिवेश का तथा उसके तत्वों का आना निश्चित हो जाता है। अधिकतर रचनाकार ग्रामीण परिवेश से जुड़े होते हैं । वे गाँव के वातावरण को बहुत निकट से देखे होते हैं। समकालीन संस्कृत कवियों की कविताओं में आम आदमी के साथ-साथ उच्चवर्ग निम्नवर्ग के संघर्ष, राजनीतिक और सामाजिक यथार्थ का चित्रण भी व्यापक रुप से देखने को मिलता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं |

डॉ.हर्षदेव माधव का एक हायकू ही आज के सामाजिक यथार्थ को दिखाने के लिए पर्याप्त है-

विलासगृहे/मार्गार्धे प्रतीक्षान्ते/वासना अपि |[6]

हाई-वे पर/होटल/वहाँ राह देखती हैं/कामुक वासनाएँ भी

डॉ.राजकुमार मिश्र'कुमार' लिखते हैं कि चोरों ने जी भर घर लूटा है मैं अपनी पीड़ा की रिपोर्ट कहाँ लिखवाऊँ? क्योंकि मैंने अपराधियों के घर में ही न्यायालयों को चलते देखा है ।

[5] वागीश्वरीकण्ठसूत्रम्, आचार्य हर्षदेव माधव, सम्पादक डॉ.प्रवीण पण्ड्या, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ संख्या 75-76

[6] वासकसज्जा ज्योत्सना, डॉ.हर्षदेव माधव, राष्टियसंस्कृतसंस्थानम् प्रकाशन नईदिल्ली, प्रथम संस्करण 2018 ई., पृष्ठ संख्या 36

लुठितं गृहं हा तस्करै: क्व नु लेखयामि व्यथामहम् ।

अधुनाऽपराधिगृहे स्थिता न्यायालया दृष्टा मया ॥1॥ ॥[7]

डॉ.लक्ष्मीनारायण पाण्डेय लिखते (फेसबुक पर 9 अक्टूबर को)है-

नगरे नगरे सदने भुवने हृदयविदारकदृश्यानि

परं श्रोतुमिच्छसि यन्मधुरं मदिरं रुचिरं सरसं त्वं,

विधुं सौरभं मधु मकरन्दं रूपं रमणकथागानं

रुधिरसिक्तपादव्रणमस्ति कथं लिखानि सखे !ब्रूहि ||

डॉ.जोगेन्द्र कुमार लिखते हैं कि- रिश्वत एक ऐसी गहरी नदी है, जिसमें सभी मनुष्य स्नान करना चाहते हैं। परन्तु जो इसमें स्नान करता है, वह कभी न कभी अवश्य ही डूब जाता है।

उत्कोचस्तु नदी घोरा स्नातुमिच्छन्ति मानवाः ।

स्नानं करोति योऽस्मिञ्च मज्जनं तस्य निश्चितम् ||76||[8]

भगवान श्रीकृष्ण को याद करते हुए डॉ.बालकृष्ण शर्मा लिखते हैं कि श्रीकृष्ण में ही कोरोना को दूर करने की सामर्थ्य है ।

कोरोनाकुलमानवीयभुवने नारायण: केवलम्

कोरोनानार्तिहर: सदैव जगतां वंशीधर: श्रीधर:

को दावाग्निपरीतदीर्घविपिनं पातुं विहायाम्बुदं

पारं याति कृषीवलैकशरणं धाराधरं सत्वरम् ॥ 4॥ [9]

अपने 'परिवर्तनकाव्यम्' काव्यसंग्रह में डॉ.हेमचन्द्र बेलवाल लिखते हैं कि-सदाचारिणी के स्थान पर दुराचारिणी का सम्मान हो रहा है |

आच्छादिता समुचितैर्वसनै: कुलीना

धिड् निन्द्यये परिचतैरपि गेहलक्ष्मी : ।

अंगप्रदर्शनता बत काचिदन्या

सम्मानिता भवति भव्यसभासु हन्त ॥9॥ [10]

---

[7] अभिज्ञानम् (अभिनवगलज्जिकासंकलनम्), डॉ.रामकुमार मिश्र 'कुमार:' सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली (भारत), प्रथम संस्करण 2020 ई., पृष्ठ संख्या 40

[8] जीवनसौरभम्, डॉ.जोगेन्द्र कुमार,पराग बुक्स प्रकाशन गाज़ियाबाद,प्रथम संस्करण 2018 ई,,पृष्ठ संख्या 29

[9] कोरोनाकोपशतकम्, डॉ.बालकृष्ण शर्मा, अमन प्रकाशन सागर (म.प्र.), प्रथम संस्करण 2020 ई., पृष्ठ संख्या 32

[10] परिवर्तनकाव्यम्, डॉ.हेमचन्द्र बेलवाल, भूमिका प्रकाशन अल्मोड़ा उत्तराखण्ड, प्रथम संस्करण 2015 ई.,पृष्ठ संख्या 3

x x x

काचिद् दरिद्रगृहिणी वसनान्यलब्ध्या

पत्रैस्तृणैश्च वदनं बत रक्षतीह ।

काचितथा धनवती परिहाय लज्जां

'टैटू' निधाय वदनं बत दर्शयन्ती ॥10॥ [11]

आज की दूषित राजनीति से कवि (डॉ.कौशल तिवारी) कितना आहत हैं । यह उनकी कविता से जाना जा सकता है ।

राजनीतिकूपे भङ्गा मिलिता सर्वत्र

कोऽपि शकुनिस्तु कोऽपि धृतराष्ट्रो दृश्यते ॥ [12]

दिल्ली के दामिनी काण्ड पर कवि (डॉ.निरंजन मिश्र) ने लिखा है कि किस प्रकार से लोग आज कामान्ध हो गए हैं । और भले बुरे को पहचानना त्याग दिये हैं । कामवासना के सामने कानून का भी भय नहीं है ।

कामान्धै: परिमर्दिताऽपि तरुणी कीर्ति गता दामिनी

दुष्टैर्यत्र बलाहकै: प्रतिदिनञ्चाच्छाद्यते चन्द्रिका ।

प्रायश्चित्तबलेन राजभवने मोदं तनोतीश्वरो

वन्दे राज्यबुभुक्षितैर्विदलितं भोगप्रियं भारतम् ॥[13]

विनोद कुमार शुक्ल की कविता 'विपणीदिवसोऽस्ति' हमारे कथाकथित सभ्य समाज के सामने एक प्रश्न खड़ा कर देती है कि जिस आदिवासी लड़की को शेर से डर नहीं लगता उसे आखिर 'गीदम' (छत्तीसगढ़ राज्य का एक नगर) के बाजार जाने से क्यों डर लगता है । क्या इसलिए कि मनुष्य की खाल में घूम रहे शेर जंगल के शेर से अधिक खतरनाक हैं?

एकाकिनी आदिवासिकन्या

निबिडं वनं गन्तुं न बिभेति,

व्याघ्रसिंहेभ्यो न बिभेति,

किन्तु

[11] परिवर्तनकाव्यम्, डॉ.हेमचन्द्र बेलवाल, भूमिका प्रकाशन अल्मोड़ा उत्तराखण्ड, प्रथम संस्करण 2015 ई.,पृष्ठ संख्या 4
[12] स्मर्तव्योऽहं तदा, डॉ,कौशल तिवारी,एजूकेशनल बुक सर्विस प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 2022 ई., पृष्ठ संख्या 32
[13] वन्दे भारतम्, डॉ.निरंजन मिश्र, प्रगतिशील प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015 ई.,पृष्ठ संख्या 7

मधूकपुष्पाणि नीत्वा 'गीदमप्रदेशविपणीं' गन्तुं बिभेति ।[14]

निष्कर्षत: पर यह कहा जा सकता है कि-

अपारे काव्यसंसारे कविरेक: प्रजापति: |

यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते ||[15]

साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं |जैसा समाज होगा वैसा ही साहित्य होगा |यह बात इक्कीसवीं सदी के संस्कृत कवियों ने सिद्ध कर दिया है |

[14] धनुरातनोति (भारतीय-आदिवासी-कविता), डॉ.ऋषिराज जानी (अनुवादक और संपादक), गोविन्द गुरु प्रकाशन गोधरा, अमदाबाद, प्रथम संस्करण 2020 ई., पृष्ठ संख्या 84

[15] काव्यप्रकाश, आचार्य मम्मट, व्याख्याकार आचार्य विश्वेश्वर प्रथम उल्लास, ज्ञानमण्डल लिमिटेड प्रकाशन वाराणसी, 2013 ई., पृष्ठ संख्या 5